Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education

Vol. V, Issue IX, January-2013, ISSN 2230-7540

REVIEW ARTICLE

महिला उत्थान के कारक

www.ignited.in

Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. V, Issue IX, January-2013, ISSN 2230-7540

महिला उत्थान के कारक

Harish Chandra

Research Scholar, CMJ University, Shillong, Meghalaya, India

----------X----------

1.1 पश्चिमी विचारधारा का प्रभाव –

ब्रिटिश पूर्व की भारतीय संस्कृति पूर्णतः धार्मिक आध्यात्मिक, परंपरावादी और भाग्यवादी थी। तथापि अंग्रेजी सम्पर्क में आकर भारतीय जीवन का स्वरूप भी बहुत कुछ बदल गया। धार्मिकता, आध्यात्मिकता एवं त्यागमयता को भौतिकता के प्रति आग्रह होने से आघात पहुंचा। यूरोपीय विचारधारा से प्रभावित होने के कारण परम्परा का व्यामोह घटने लगा और नई वैज्ञानिक दृष्टि में भाग्यवाद के प्रति अनास्था उत्पन्न होने लगी। इसके अतिरिक्त भारतीय संस्कृति के आंतरिक गुणों–आदर्श–नैतिकता–बुद्धि आदि में भी परिवर्तन हुआ। इन तत्वों पर सर्वाधिक प्रभाव पाश्चात्य शिक्षा का पड़ा। अंग्रेजी शिक्षा का प्रचार कर मैकाले भारत में एक ऐसा वर्ग ही बनाना चाहता था जो जन्म और रंग से भारतीय प्रतीत हो, पर अन्य सभी दृष्टियों से अंग्रेज बन जाए। प्रारम्भ में भारतीय संस्कृति पश्चिमी संस्कृति की ओर झुकती प्रतीत हुई। भारत में अनेक ऐसे लोग थे जिनके लिये पाश्चात्य संस्कृति आदर्श बन गई थी। वे उसकी नकल करने लगे थे। भारतीय धर्म–समाज व दर्शन में उनको कोई विश्वास नहीं था। ऐसा प्रतीत होने लगा था कि सम्पूर्ण भारत इस पश्चिमी संस्कृति का शिकार हो जायेगा।

तथापि पश्चिमी संस्कृति का गूढ़ अध्ययन करने वाले भारतीयों ने पश्चिम की ओर इस अंधे आकर्षण का विरोध किया। इन्होंने भारतीयों को अपनी संस्कृति और धर्म में विश्वास करने की प्रेरणा दी। इन शिक्षित सुधारवादी भारतीयों ने तर्क के आधार पर पश्चिमी संस्कृति का परीक्षण प्रारम्भ किया। उन्होंने प्राचीन के सर्वश्रेष्ठ को चुना और पाश्चात्य के श्रेष्ठ के साथ सामंजस्य बिठाया। उन्होंने अस्पृश्यता, पर्दा–प्रथा, बहु–विवाह, बाल–विवाह, देवदासी प्रथा एवं निरक्षरता आदि सामाजिक कुप्रथाओं को समाप्त करने का बीड़ा उठाया, जिससे मध्यम वर्ग में सामाजिक चेतना जागृत हुई। इसके अतिरिक्त पाश्चात्य संस्कृति का भारतीय समाज के संपर्क से प्राचीन भारतीय नैतिक विचार परिवर्तित होने लगे। फलस्वरूप विवाह, खान–पान वेश–भूषा, आचार–विचार, शिष्टाचार, व्यवहार आदि पर पाश्चात्य प्रभाव झलकने लगा। जाति प्रथा की जकड़न ढीली पड़ने लगी। इस प्रकार पाश्चात्य सभ्यता एवं संस्कृति ने जीवन और चरित्र को एक नया दृष्टिकोण प्रदान किया।

1.1.1. सामाजिक प्रभाव –

पाश्चात्य सभ्यता और संस्कृति के प्रभाव ने भारतीय समाज में क्रांति उत्पन्न कर दी। मध्यकालीन सांस्कृतिक समन्वय के काल में भी सन्त कबीर, चैतन्य आदि ने इस बात का प्रयत्न किया था कि जाति प्रथा की कठोरता और छूआछूत के भेदभाव को दूर करके समानता के आधार पर हिन्दू समाज को पुनः संगठित किया जाए, पर उनके प्रयत्नों का विशेष आशाप्रद परिणाम नहीं हुआ था। पाश्चात्य सभ्यता ने हमारी जाति–प्रथा पर प्रहार किया। अंग्रेजों के शासन काल से पूर्व जाति–प्रथा अपने समस्त प्रतिबन्धों तथा नियमों के साथ हिन्दू जीवन को घेरे हुए थी। परन्तु अंग्रेजी शासनकाल में कुछ इस प्रकार के कारकों या शक्तियों का इस देश में विकास हुआ जिनके कारण जाति–प्रथा के संरचनात्मक तथा संस्थात्मक दोनों ही पहलुओं में क्रांतिकारी परिवर्तन हो गये। यातायात के साधनों के विकास के फलस्वरूप नगरों और गांवों के बीच दूरियां समाप्त हो गयीं तथा ग्रामीण व शहरी लोगों के बीच विचारों का आदान–प्रदान हुआ। जिससे गांवों में जाति–पाँति के प्रति उतनी कट्टरता नहीं रही।

अस्पृश्यता को समाप्त करने के विचार का जन्म पाश्चात्य संस्कृति के ही प्रभाव के कारण सम्भव हो सका। पाश्चात्य शिक्षा और मूल्यों ने समानता के सिद्धांत को भारत के सामाजिक वातावरण में पैदा किया। नगरों की उन्नत सामाजिक परिस्थितियों ने अछूतों को भी उनके अधिकार के सम्बन्ध में सचेत किया। इस जागरूता को आर्य समाज, ब्रम्ह समाज, रामकृष्ण मिशन और विशेषकर गांधी जी ने और भी सक्रिय किया।

पाश्चात्य संस्कृति ने धीरे – धीरे भारतीय रहन–सहन, रीति–रिवाज और प्रथाओं को प्रभावित किया। वेश–भूषा, खान–पान, बोलने तथा अभिवादन करने के तरीकों में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुये। पाश्चात्य संस्कृति, शिक्षा और विचारधाराओं ने भारतीयों को न केवल दुनियाँ के राष्ट्रीय जीवन के संम्पर्क में ला दिया, बल्कि देश के अन्दर विभिन्न विपरीत समूहों में एक सांस्कृतिक समानता को भी उत्पन्न किया। इस सांस्कृतिक समानता से भारतीय जीवन में एकता और राष्ट्रीयता की नवीन लहर दिखाई दी।

1.1.2 धार्मिक जीवन में परिवर्तन –

भारत में पश्चिमी संस्कृति के प्रचार–प्रसार के पूर्व धर्म एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता था। धार्मिक रीति–रिवाजों एवं पाखंडों ने व्यक्ति के जीवन को जकड़ रखा था।

धार्मिकता के नाम पर अनेक कुसंस्कारों एवं कुरीतियों ने व्यक्ति का स्वतंत्र होकर जीना दूभर कर दिया था। जातिगत भेदभाव, सती प्रथा,प्रर्दा प्रथा, बाल–विवाह, विधवाओं पर अत्याचार, धार्मिक, कर्मकाण्ड, पाप निवारण के नाम पर लोगों का शोषण आदि अनेकानेक रुढ़ियों एवं अंधविश्वासों के कारण भारतीय समाज हजारों वर्षों से अज्ञानता के अंधकूप में पड़ा हुआ था। पाश्चात्य शिक्षा, धर्म तथा आदर्शों एवं मूल्यों ने इस स्थिति में सुधार लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। अन्ध विश्वास और श्रद्वा का स्थान बुद्धि – विवेक और तर्क ने ले लिया एवं उदारता तथा स्वतंत्र विचार कट्टरता और शास्त्रवाद पर विजयी

www.ignited.in

होने लगे। प्राचीन विश्वासों,परम्पराओं और सिद्वान्तों को विज्ञान, तर्क, समालोचना और विश्लेषण की कसौटी पर उतारा गया और उनमें से अनेकों की अवांछनीय तत्वों व लक्ष्णों और परम्पराओं की निन्दा कर उन्हें त्याग दिया गया। जैसे मूर्तिपूजा, बहूदेववाद, पुरोहित प्रभुता आदि पश्चिमी संस्कृति के प्रभाव से भारतीय समाज के अनेक लोग ईसाई दृष्टिकोण रहन–सहन और खान–पान की ओर झुके। भारतीय दर्शन के स्थान पर पाश्चात्य दर्शन और बाइबिल का गहन अध्ययन किया जाने लगा। सौभाग्य से इस प्रवृति के विरूद्व प्रतिक्रिया प्रारम्भ हुई और राजा राममोहन राय, स्वामी दयानंद सरस्वती, स्वामी विवेकानंद और अरविन्द जैसे धार्मिक और सामाजिक सुधारकों ने अपने आन्दोलनों से इस प्रवृत्ति का अन्त कर दिया।

राजा राममोहन राय ने बंगाल में ब्रम्ह समाज की स्थापना की। जिसका उद्देश्य समाज सुधार तथा धर्म सुधार था। राजा राममोहन राय के बाद महर्षि देवेन्द्र नाथ ठाकुर तथा केशवचन्द्र सेन ने ब्रम्ह समाज के संचालन का काम अपने ऊपर लिया। उसी प्रकार स्वामी दयानंद सरस्वती ने सन् 1875 में आर्य समाज की स्थापना की, तथा शुद्धि आन्दोलन का सूत्रपात किया। स्वामी दयानंद भारत में न केवल वैदिक धर्म की ही स्थापना करना चाहते थे, बल्कि भारतीय सामाजिक ढॉचे को जन्म पर आधारित जाति – प्रथा के बजाय कर्म पर आधारित वर्ण–व्यवस्था के रूप में बदल देना चाहते थे। स्वामी विवेकानंद ने वेदान्त की एक नवीन और वास्तविक व्याख्या करते हुए धर्म से दूर न जाकर भी धर्म के आधार पर ही भारत को समानता ,प्रेम और भातृभाव का नया पाठ पढ़ाया। इस प्रकार पाश्चात्य सभ्यता और संस्कृति से प्रभावित भारतीय समाज सुधारकों के प्रयासों ने भारतीयों में आत्मविश्वास तथा अपनी प्राचीन गौरवमयी परम्पराओं के प्रति श्रद्वा उत्पन्न की। जिससे देश में राष्ट्रीय चेतना का संचार हुआ।

1.1.3 आर्थिक जीवन में परिवर्तन –

पाश्चात्य सभ्यता और संस्कृति का जितना प्रभाव आर्थिक क्षेत्र पर पड़ा उतना शायद किसी क्षेत्र में नहीं पड़ा। इसका कारण यह था कि अंग्रेज भारत में व्यापारिक उद्देश्य लेकर आये थे, संयोग से उन्हे राज्य भी मिल गया। अपनी राजसत्ता का लाभ उठाकर उन्होने अपने व्यापार को बढ़ाने तथा अधिकाधिक व्यापारिक लाभ कमाने के प्रयास प्रारम्भ कर दिये। अंग्रेजी राज की स्थापना के बाद गॉवों की परम्परागत आत्मनिर्भरता में कमी आयी। ग्रामीण कुटीर एवं लघु उद्योगों का महत्व मशीनीकरण के चलते कम होने लगा। जमींदारी प्रथा के विकास से कृषकों की आर्थिक दशा दयनीय होने लगी। मिल और मशीनों की स्थापना शहरों में की जाने लगी, जिससे काम करने के लिए लोग गाँवों से शहरों की तरफ पलायन करने लगे। मिल मालिकों का मुख्य लक्ष्य पैसा कमाना था। अतः वे मजदूरों के शोषण से बाज नहीं आते थे। इतना ही नही अंग्रेजों ने भारतीय भू–संपदा, मानव संपदा और कृषि –संपदा का काफी दोहन किया और उन्होंने अपने व्यापार को समृद्ध किया। उन्होंने यातायात और संचार के साधन निर्मित जरूर किए, जिससे सारा भारत एक–दूसरे से जुड़ सका, पर इसके पीछे भी आर्थिक शोषण का उद्देश्य छिपा था। इस शोषण ने धीरे–धीरे कृषक एवं श्रमिक आन्दोलनों का सूत्रपात किया। जिसके चलते राष्ट्रीयता की भावना और भी ज्यादा बलवती हुई।

1.1.4 शिक्षा पर प्रभाव –

भारत जैसे बड़े देश का शासन–प्रबन्ध चलाने के लिए ब्रिटिश सरकार को अनेक व्यक्तियों की आवश्कता थी जो कि नौकरशाही व्यवस्था के अन्तर्गत दफ्तर आदि में काम कर सकें। इसलिए यहीं के लोगों को शिक्षित करना आवश्यक था। इस शिक्षा – प्रसार का उद्देश्य अपने स्वार्थों की पूर्ति थी, न कि भारतीयों का कल्याण। यह शिक्षा किताबी शिक्षा मात्र थी जिसका कोई सम्बन्ध तकनीकी शिक्षा से न था फिर भी शिक्षा के क्षेत्र में पाश्चात्य संस्कृति के प्रभावों को अस्वीकार नही किया जा सकता। ईसाई धर्म प्रवर्तकों ने इस देश में अंग्रेजी शिक्षा का प्रारम्भ किया। सन् 1835 में लार्ड बैटिंक के शासनकाल में लार्ड मैकाले ने स्कूलों में अंग्रेजी के माध्यम द्वारा शिक्षा देने का विधान किया। इससे शिक्षा के क्षेत्र में एक क्रान्तिकारी परिवर्तन हुआ। कुछ समय के पश्चात् इसी शिक्षा पद्धति ने भारतीयों को जागृत करने में अत्यधिक सहयोग दिया। अंग्रेजी साहित्य जो राष्ट्रीयता से ओत–प्रोत था, भारतीयों में राष्ट्र–प्रेम जागृत करता रहा तथा इन जागृत व्यक्तियों ने अपने देश की परतंत्रता की बेड़ियॉ काटने के लिए राष्ट्रीय आन्दोलन प्रारम्भ किया। भारतीयों के मानसिक विकास में शिक्षा पद्धति अत्यन्त सहायक सिद्ध हुई। अंग्रेजी भाषा के अध्ययन एवं ज्ञान से विश्व के अन्य भागों में भारत के सम्पर्क बढ़े तथा भारतीय अपनी शताब्दियों की अज्ञान निंद्रा को त्यागकर जागृत हुए। यद्यपि इस शिक्षा का प्रसार अंग्रेजो ने अपने हित के लिए प्रारम्भ किया था, किन्तु अन्त में इसी शिक्षा के प्रसार से भारतीयों को अकथनीय लाभ पहुँचा तथा भारत में आधुनिक युग के जन्म का श्रेय अधिकांशतः इस शिक्षा सम्बन्धी सुधार को ही दिया जा सकता है।

1.1.5 स्त्रियों पर पश्चिम का प्रभाव –

पश्चिमी प्रभाव के कारण भारत में 19 वीं शताब्दी में धार्मिक तथा सामाजिक सुधार आन्दोलन प्रारम्भ हुए, जिसके द्वारा भारतीय समाज में व्याप्त बुराइयो को दूर करने के प्रयास किये गये। भारतवर्ष में पश्चिम का प्रभाव स्त्रियों पर बहुत अधिक पड़ा। उनकी दशा में सुधार हुआ। हिन्दू विवाह एक धार्मिक संस्कार माना जाता रहा है। पतिपरमेश्वर की धारणा स्त्रियों के मन से जुड़ी रहने के कारण तलाक जैसी बातें समाज में लगभग अस्वीकृत एवं अशोभनीय मानी जाती थी किन्तु अब विवाह को न धार्मिक संस्कार माना जाने लगा, अपितु जातिगत विवाह होना भी आवश्यक नहीं रहा। पश्चिमीकरण के प्रभाव के कारण ही बाल– विवाह एवं सती प्रथा पर रोक लग गई एवं विधवा विवाह को भी मान्यता मिलने लगी।

पाश्चात्य विचारों के प्रभाव से स्त्रियों ने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में पुरूष से समानता की मांग की भारत में स्त्रियों को ऊँची शिक्षा प्राप्त करने की अनुमति नहीं थी। उनके लिए रामायण बाँचने का ज्ञान होना ही पर्याप्त समझा जाता था। स्त्रियों की शिक्षा के लिए सुधारकों को बड़ा संघर्ष करना पड़ा। सबसे पहले कलकत्ता विश्वविद्यालय ने स्त्रियों को उच्च शिक्षा की स्वीकृति दी। क्रमशः स्त्रियों में उच्च शिक्षा बढ़ने लगी। अंग्रेजी शिक्षा के माध्यम से भारतीय स्त्रियों पर अंग्रेजी सभ्यता का प्रभाव पड़ा। इस प्रभाव से कुछ महत्वपूर्ण परिवर्तन दिखाई पड़े जसै (1) पर्दे का बहिष्कार, (2) पुरूषों के साथ समानता की मांग।

स्पष्ट है कि ब्रिटिश शासनकाल में पश्चिमी विचारधारा एवं पश्चिमी संस्कृति का प्रभाव भारत के विभिन्न क्षेत्रों में दृष्टिगोचर हुआ। भारतीय समाज धर्म, अर्थव्यवस्था, शिक्षा तथा स्त्रियों की दशा में क्रांतिकारी परिवर्तन होने लगे। महिलाओं के उत्थान में पश्चिमी विचारधारा का प्रभाव विशेष रूप से उल्लेखनीय रहा।

1.2. भारतीय समाज सुधारक –

1. 2 .1. समाज सुधारकों का योगदान –

सर्वपल्ली राधाकृष्णन् ने हिन्दू–धर्म की व्याख्या करते हुए लिखा है कि यह एक जीवन प्रणाली है। भारत में धर्म का दायरा बड़ा विस्तृत है और इसी को केन्द्र मान भारतीय जीवन और समाज संगठित हुआ है। अतः जब धार्मिक क्षेत्रों में पाश्चात्य शिक्षा और बुद्धिवाद का प्रभाव पड़ा तो सामाजिक क्षेत्र उससे कैसे बच जाता? धर्म की बुद्धिवादी व्याख्या से समाज पर प्रभाव पड़ना स्वाभाविक ही था। 19वीं शताब्दी के भारतीय समाज में अनेक गर्हित लोकाचार तथा कुरीतियाँ धर्म के नाम पर जुड़ गयी थी। धर्म की पवित्रता के आवरण में इन कुरीतियों ने सहज मानवीय दुःख–सुख की भावना को भी भुला दिया था।

भारतीय समाज में अनेक कुप्रथाएँ प्रचलित थी। सती–प्रथा, बाल विवाह पर्दा–प्रथा कन्या–वध अनमेल विवाह आदि अनेक सामाजिक कुरीतियों का प्राबल्य था। नारी पर तरह – तरह के अत्याचार हो रहे थे। दहेज प्रथा का प्रचलन जोरों पर था। विधवाओं की स्थिति तो नरक से भी बदतर थी, मानों पति की मृत्यु का कारण वही हो। समाज में दोहरे नियम थे। पुरूषों में बहु–विवाह प्रचलित था तथा एक पत्नी की मृत्यु होने पर उसे दूसरा विवाह करने की छूट थी। लेकिन स्त्रियाँ किसी भी अवस्था में पुनर्विवाह नहीं कर सकती थी। पति की मृत्यु के बाद भी वफादारी का प्रमाण देने के लिए उसका पति की चिता की अग्नि में प्रवेश प्रवेश अनिवार्य था। इस प्रकार नारी का तो अपना अस्तित्व ही नही रह गया था। वस्तुतः पराधीन जीवन के साथ नारी का तो मानस भी पराधीन बन गया तथा कुरीतियों का प्रतिकार करने की शक्ति ही समाप्त हो गई थी।

उन्नीसवीं शताब्दी में जहाँ एक ओर समाज में महिलाओं की शोचनीय स्थिति पराकाष्ठा पर पहुंच रही थी, वहीं दूसरी ओर भारतीय समाज में सुधार के प्रयास भी हो रहे थे। धर्म और समाज में व्याप्त अनेक कुरीतियों तथा अन्धविश्वासों को दूर करने हेतु जो एक नई चेतना उत्पन्न हुई उसे पुनर्जागरण की संज्ञा दी गई। इस पुनर्जागरण के मूल में दो प्रकार की प्रेरणा काम कर रही थी– पाश्चात्य तथा यूरोपीय सभ्यता से सम्पर्क तथा प्राचीन भारत की गौरवमय सांस्कृतिक परम्परा।

भारतीयों का पाश्चात्य सभ्यता से सम्पर्क अंग्रेजी भाषा तथा शिक्षा पद्धति के माध्यम से हुआ जिसके फलस्वरूप भारतीय समाज में एक नवीन बुद्धिवादी मध्य वर्ग का उदय हुआ। जिसने प्राचीन भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति का अध्ययन कर हिन्दुत्व का संशोधित रूप प्रस्तुत किया तथा पाश्चात्य आधुनिक विचारों को भी अपनाया। उन्नीसवीं शताब्दी में विभिन्न धर्म एवं समाज सुधार आंदोलनों के प्रर्वतकों द्वारा स्त्रियों की दशा में सुधार के लिए अनेक प्रयास किये गये, जिसका विवरण निम्नलिखित है :–

1.2.2. राजाराममोहन राय –

19वीं शताब्दी के समाज सुधारकों में राजा राम मोहनराय का नाम सबसे अग्रणी है। ब्रम्ह समाज के संस्थापक राजा राममोहनराय को 'नवीन युग का प्रवर्तक' भारतीय पुनर्जागरण–आन्दोलन का पिता 'भारतीय राष्ट्रीयता का देवदूत' आदि विभिन्न उपाधियां दी गयी हैं और इसमें सन्देह नहीं कि यह बहुत कुछ उचित है। राजा राममोहन राय निस्सन्देह आधुनिक भारत के निर्माता थे। 19वीं सदी का कोई भी सामाजिक,धार्मिक और राजनीतिक आन्दोलन ऐसा न था जिसके आरम्भ करने में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से उन्होंने सहयोग न दिया हो।

राजा रामराम मोहनराय स्त्रियों के उत्थान के बहुत बड़े समर्थक थे। उन दिनों कुलीन हिन्दुओं में सती–प्रथा का प्रचलन था, जिसका उन्होंने घोर विरोध किया। सती–प्रथा को समाप्त करने के लिए उन्होंने अपने समाचार पत्र ''संबाद–कौमुदी'' के माध्यम से अभियान चलाया। उन्हीं के अथक प्रयासों के फलस्वरूप तत्कालीन गवर्नर जनरल लार्ड विलियम बैटिंक ने 4 दिसम्बर 1829 को सती प्रथा को समाप्त करने हेतु कानून बनाया। राजाराम मोहनराय ने उदार और वैज्ञानिक, सामाजिक विचारों के विकास के अथक प्रयास किए। उन्होंने नारी स्वातन्त्रय, नारी अधिकार और नारी–शिक्षा पर बड़ा बल दिया तथा हिन्दू नारी के साथ किए जाने वाले अन्याय और अत्याचार की कटु निन्दा की। अपने मृत पति की सम्पति में स्त्री को उचित भाग न देने के नियम की उन्होने विशेष रूप से भर्त्सना की। उन्होने बहुपत्नी–प्रथा के विरूद्व एक ऐसी वैधानिक व्यवस्था की आवश्यकता पर बल दिया कि कोई भी हिन्दू एक मजिस्ट्रेट से लाइसेंस लिए बिना अपनी पहली पत्नी के जीवन–काल में दूसरा विवाह न कर सके। उनका ही स्वप्न था कि बाल विधवाएं पुनर्विवाह करें और प्रौढ़ विधवाएं आत्म–सम्मान का जीवन व्यतीत करने के लिए शिक्षित की जाएं। उन्होंने यह मानने से इन्कार कर दिया कि स्त्रियाँ पुरूषों की अपेक्षा मन्द–बुद्धि थी। भारतीय इतिहास के उदाहरण देकर उन्होने यह सिद्ध किया कि लीलावती, भानुमति,कर्षट राजा एवं कालिदास की पत्नी तथा मैत्रेयी आदि नारियाँ प्रतिभा, विद्या और ज्ञान की साकार मूर्तियाँ थीं।

इस प्रकार महिलाओं के उत्थान हेतु सामाजिक सुधार आन्दोलन को राजा राममोहन राय द्वारा गतिशीलता प्राप्त हुई। उन्होने दासता पूर्ण जीवन यापन करने वाली नारियों की युगों से चली आ रही गुलामी की जंजीरों को काटने का प्रयास किया। उन्हीं के हाथों पहले पहल सुधार और संगठन का मंत्र सीखकर भारतीयों ने नवयुग का वह विधान पाया जिसके बल पर वे आज उन्नति की कक्षा में प्रवेश कर सके है।

1.2.3 स्वामी दयानंद सरस्वती –

आर्य समाज के संस्थापक स्वामी दयानंद सरस्वती वेदों के प्रकांड विद्वान तथा सामाजिक न्याय के प्रबल समर्थक थे। उनका उद्देश्य सामाजिक व आर्थिक रूप से पिछड़े हुए हिन्दू समाज को ऊंचा उठाना था। उनके अनुसार हिन्दू समाज के विभिन्न जातियों में बँटे होने का मुख्य कारण बहुदेववाद और मूर्तिपूजा था, जिनके कारण समाज में संकीर्णता रूढ़िवादिता और अंधविश्वास फैला हुआ था। उन्होंने देखा कि लोग कायर थे और अपनी सुविधा ही उनका जीवन दर्शन था। कुरीतियाँ कितनी ही थी जाति प्रथा बाल–विवाह तथा विधवाओं के प्रति अमानुषिक व्यवहार। स्त्रियों को शिक्षा की अधिकारिणी ही नहीं समझा जाता था। उन्होंने इन सभी कुरीतियों से एक साथ लड़ने का निश्चय कर लिया। सोच लिया कि वे लिखकर भाषण देकर तथा एक संगठन तैयार करके अपने समय की सामाजिक कुरीतियों से लोहा लेगें। जब तक समाज में जागृति नही आयेगी वे साँस नही लेंगे। राजा राममोहन राय की तरह स्वामी दयानंद सरस्वती ने भी स्त्रियों के उत्थान के लिये जोरों से अपनी आवाज उठाई और उनको समान अधिकार देने के लिए समाज को प्रेरित किया। उन्होंने बाल–विवाह, पर्दा–प्रथा,

दहेज–प्रथा आदि सामाजिक बुराइयों का विरोध करते हुए स्त्रियों के उत्थान के लिए शिक्षा की आवश्यकता को समझा । उनका विचार था कि प्राचीन काल में भारतीय स्त्रियों के शिक्षित होने के कारण उन्हें समाज में आदर प्राप्त था। अतः समाज के उत्थान के लिए स्त्रियों की शिक्षा पर ध्यान देना चाहिए। बाल –विवाह के दोषों को दूर करने के लिए दयानंद सरस्वती ने आर्य समाज के माध्यम से विवाह कराने की प्रणाली का सूत्रपात किया। उन्होंने यह विचार रखा कि 16 वर्ष और 25 वर्ष की आयु क्रमशः स्त्री और पुरूष के लिए एक ऐसी अवस्था है जिसमें विवाह के अर्थ और स्वरूप को वे समझ सकते है तथा अपने विवेक के अनुसार अपने जीवन साथी को चुन सकते हैं। इसी तरह विधवा विवाह का समर्थन करके उन्होंने एक पिछड़े समाज को अग्रगामी बनाने में बहुत बड़ा योगदान दिया। स्त्रियों को दीन–हीन दशा से ऊपर उठाने में स्वामी दयानंद ने जीवन – पर्यन्त कोई शिथिलता नहीं आने दी। उनकी दिव्य दृष्टि ने भारत की आत्म–गाथा में सत्य और एकता का बीज देखा, जिसकी प्रतिभा ने भारतीय जीवन के विविध अंगो को प्रदीप्त कर दिया।उनका उदेश्य इस देश को अविद्या, अकर्मण्यता और प्राचीन ऐतिहासिक तत्व विषय अज्ञान से मुक्त कर सत्य और पवित्रता के लोक में लाना था।

1.2.4 स्वामी विवेकानंद –

रामकृष्ण परमहंस के शिष्य स्वामी विवेकानंद ने वेदांत दर्शन की पताका पश्चिमी देशों में फहराई। सन् 1893 ई.में शिकागों में हुए विश्व धर्म सम्मेलन में उन्होनें भारतीय धर्म और संस्कृति की उदारवादी व्याख्या कर समूचे विश्व में वेदांत दर्शन की महत्ता स्थापित की। वे सामाजिक समन्वय के पक्षधर थे, अतः उन्होंने सभी धर्मो में पुरोहितवाद का विरोध किया। उपनिषद के आधार पर उनकी मान्यता थी कि समाज में सबको बराबरी का स्थान प्राप्त होना चाहिये। इसी आधार पर उन्होंने नारी जागरण का प्रयास किया। वे स्त्री को समाज का महत्वपूर्ण अंग मानते थे तथा उनकी गरिमा को पुनर्स्थापित करना चाहते थे। उन्होंने रामकृष्ण मिशन के माध्यम से स्त्रियों की शिक्षा के लिए प्रयास किये। उनका मानना था कि सभी उन्नत राष्ट्रों ने स्त्रियों को समुचित सम्मान देकर ही महानता प्राप्त की थी। जो देश, जो राष्ट्र स्त्रियों का आदर नहीं करते , वे कभी बड़े नहीं हो पाए और न भविष्य में ही कभी बड़े होंगे। उनके शब्दों में सच्चा शक्ति पूजक वह है, जो यह जानता है कि ईश्वर विश्वव्यापी शक्ति है और स्त्रियों में उस शक्ति का प्रकाश देखता है। हमारे देश के पतन का मुख्य कारण यह है कि हमने शक्ति की इन सजीव प्रतिमाओं के प्रति आदर बुद्धि नहीं रखी। स्त्रियों की शिक्षा के संबन्ध में उन्होंने कहा कि स्त्रियों की बहुत सी कठिन समस्याएँ है, पर उनमें एक भी ऐसी नही,जो उस जादू–भरे शब्द 'शिक्षा' के द्वारा हल न हो सके। पुत्रियों का लालन–पालन और शिक्षा उतनी ही सावधानी और तत्परता से होनी चाहिए, जितनी पुत्रों की। स्त्रियों को ऐसी अवस्था में रखना चाहिए कि वे अपनी समस्याओं को अपने ही तरीके से हल कर सकें। इसी प्रकार विवेकानंद ने बाल–विवाह के विरूद्व आवाज उठाकर नारी समाज के प्रति लोगों को जागरूक किया। बाल–विवाह के दुष्परिणामों कों स्पष्टतया सामने रखते हुए उनका कथन था कि ''बाल–विवह से असामयिक सन्तानोत्पति होती है और अल्पायु में संतान धारण करने के कारण हमारी स्त्रियाँ अल्पायु होती है, उनकी दुर्बल और रोगी सन्तान देश में भिखारियों की संख्या बढ़ाने का कारण बनती है। आज घर–घर इतनी अधिक विधवाएँ पाये जाने का मूल कारण बाल–विवाह ही है। यदि बाल–विवाहों की संख्या घट जाए तो विधवाओं की संख्या भी स्वमेव घट जाएगी।'' एक विशेष सभा में स्वामी विवेकानंद ने भारत की स्त्रियों के वर्तमान और भविष्य पर विचार किया। उन्होंने कहा– ''किसी राष्ट्र की प्रगति का सर्वोतम थर्मामीटर है वहाँ की महिलाओं के साथ होने वाला व्यवहार। हिन्दू स्त्रियाँ बहुत ही आध्यात्मिक और धार्मिक होती हैं, कदाचित संसार की सभी महिलाओं से अधिक। यदि हम उनकी इन सुन्दर विशिष्टताओं की रक्षा सकें और साथ ही उनका बौद्विक विकास भी कर सकें तो भविष्य की हिन्दू नारी संसार की आदर्श नारी होगी।''

1.2.5 महादेव गोविन्द रानाडे(प्रार्थना सामाज) –

विवेक पूर्ण उपासना करने ,जाति–प्रथा को अस्वीकार करने, विधवा विवाह का प्रचार करने ,स्त्री शिक्षा को प्रोत्साहित करने , बाल–विवाह का बहिष्कार करने, तथा समाज – सुधार की दृष्टि से मुंबई में 'प्रार्थना समाज' की स्थापना केशवचंद्र सेन की प्रेरणा से की गई। इसके प्रमुख नेता महादेव गोविन्द रानाडे थे। महाराष्ट्र में समाज–सुधार के कार्यक्रमों को प्रारम्भ करने का श्रेय महादेव गोविन्द रानाडे को दिया जाता है। रानाडे महाराष्ट्र के नवजीवन के प्रतीक थे। 19 वीं शताब्दी में स्त्रियों की स्थिति बड़ी गम्भीर थी स्त्रियों को उनकी करूणामय स्थिति से उबारने के लिए उन्होने विशेष प्रयत्न किये। उन्होंने विधवाओं के पुनर्विवाह का पक्ष लिया और 1866 में स्थापित 'विधवा पुनर्विवाह समिति' के सदस्य बने उन्होंने विधवाओं के नारकीय जीवन को समझा और इस सामाजिक बुराई को दूर करने के लिए अथक परिश्रम किया। बाल विवाह के कारण भारत में बाल विधवाओं की बढ़ी हुई समस्या को देखकर उन्होंने बाल विवाह का घोर विरोध किया। उन्होने मुम्बई के एक विख्यात पत्रकार और समाज सुधारक बेहरामजी मलाबारी के इस प्रयास में पूरा समर्थन दिया कि सरकार एक ऐसा कानून बनाए जिसके द्वारा विवाह के लिये लड़कियों की न्यूनतम आयु निर्धारित कर दी जाए और हिन्दू विवाह से सम्बन्धित कुछ अन्य विषयों का नियमन किया जाये। रानाडे ने उन सामजिक प्रथाओं की घोर निन्दा की जो स्त्रियों को अशिक्षित बनाये रखती थी और जिनकी दृष्टि में उन्हें शिक्षा देना बुरा था। नारी शिक्षा एक सामाजिक समस्या थी। उसके रास्ते की रूकावट आर्थिक कठिनाई नहीं बल्कि लोकमत को जागृत करने का यथा सम्भव प्रयास था। इस दिशा में उनका पहला व्यावहारिक कदम था– स्वयं अपनी पत्नी को शिक्षित करना।

1.2.6 ईश्वर चन्द विद्यासागर –

ईश्वरचन्द्र विद्यासागर भारतीय और पाश्चात्य संस्कृति के विवेकपूर्ण संयोग का प्रतिनिधित्व करते थे। वे महान मानवतावादी थे तथा असहायों, निर्धनों और पीड़ितों से उन्हें अत्यधिक सहानुभूति थी। समाज सुधारक के रूप में वह जाति प्रथा के तीव्र विरोधी थे और स्त्रियों की स्थिति को सुधारने के पक्षधर थे। विधवाओं की स्थिति में सुधार तथा स्त्रियों की शिक्षा में ही उन्होंने अपने जीवन को समर्पित कर दिया । उन्होंने एक उदारचेता अंग्रेज बेथून महोदय की सहायता से कलकत्ता में एक गर्ल्स स्कूल की स्थापना की तथा स्वयं के प्रयासों से 25 बालिका स्कूलों की स्थापना की। विशेष रूप से ईश्वरचन्द्र विद्यासागर ने विधवा–पुनर्विवाह की दिशा में एक अभियान चलाया। उन्होंने जहाँ सती प्रथा एवं बहु विवाह का विरोध किया वहीं विधवाओं की दयनीय स्थिति को सुधारने का पक्ष लेते हुए वि धवा विवाह का समर्थन किया। उन्होंने अपने पुत्र का विवाह विधवा बालिका से कर समाज के सामने एक आदर्श प्रस्तुत किया अपनी पुस्तक –द मेरिजेस ऑफ द हिन्दू विडोज' में उन्होंने किसी भी सभ्य सामाज में विधवाओं को पुनर्विवाह के अधिकार न देने की आलोचना करते हुए इस बात की वकालत की कि विधवा पुनर्विवाह से स्त्रियों की कई समस्याओं का समाधान हो सकता था इसी भावना से उन्होंने 14 अक्टूबर

1855 को विधवा विवाह को मान्यता देने के उद्देश्य से सरकार को एक प्रतिवेदन दिया। विद्यासागर के प्रयत्नों का ही परिणाम रहा कि तत्कालीन गवर्नर जनरल लार्ड डलहौजी ने 26 जुलाई 1856 को हिन्दू विडोज मैरिज एक्ट पारित कर विधवा विवाह को कानून सम्मत बना दिया और विवाहित विधवाओं के बच्चों को भी वैध बच्चों का दर्जा मिल गया।

इस अधिनियम के पारित होने से ईश्वरचन्द्र विधासागर को प्रोत्साहन मिला। अतः उन्होंने बहु विवाह के विरूद्ध आवाज उठाकर लगभग 50 हजार स्त्री–पुरूषों के हस्ताक्षरों से युक्त याचिका में सरकार से बहु–विवाह को समाप्त करने का आग्रह किया। किन्तु 1858 ई. में कम्पनी का शासन समाप्त कर ब्रिटिश ताज के अधीन स्थापित सरकार के द्वारा भारतीय समाज की बुराईयों के प्रति अहस्तक्षेप की नीति अपनाने के कारण इस दिशा में कोई कार्यवाही नही हो सकी।

1.2.7 महात्मा ज्योतिराव फुले –

महात्मा ज्योतिराव फुले अछूतों के मसीहा स्त्री शिक्षा के कर्णधार, हिन्दू विधवाओं के उद्धारक और ब्राम्हणवाद के कट्टर शत्रु थे। 1848 ई. में उन्होंने शूद्र व अतिशूद्र लड़कियों के लिये एक स्कूल खोला जिसका पूना के कट्टर पंथी ब्राम्हणों ने जबरदस्त विरोध किया। उन्हें अपने स्कूल में पढ़ाने के लिये कोई अध्यापक भी नहीं मिला वे इससे भी विचलित नहीं हुये। उन्होंने अपनी पत्नी सावित्री बाई को घर पर शिक्षित कर स्कूल में अध्यापन कार्य करने के लिए भेजना प्रारम्भ किया। इससे उनकी खुलकर आलोचना हुई पर वे अपने रास्ते पर डटे रहे। शिक्षा की समुचित व्यवस्था के लिए ज्योतिबा ने 'महिला शिक्षा समिति' की स्थापना की। उन्होंने 3 जुलाई 1851 ई. को एक और स्कूल स्थापित किया, जिसमें सावित्री बाई को प्रधानाध्यापिका नियुक्त किया गया। इसके बाद ज्योतिबा ने दो स्कूल और स्थापित किये। नारी शिक्षा के विस्तार के लिये वे लगे ही रहे और अन्ततः सारे महाराष्ट्र में नारी शिक्षा के व्यापक प्रसार में सफलता पाई। ब्रिटिश सरकार ने भी उनको इस कार्य के लिए काफी सहायता दी।

इस बीच उनकी भेंट एक गर्भवती विधवा से हुई। उसकी करूण कहानी सुनकर ज्योतिबा का हृदय करूणा से भर गया। तब उन्होंने विधवा विवाह का प्रसार भी प्रारम्भ कर दिया। कई विधवाओं के विवाह उन्होने स्वयं कराये और ऐसी विधवाओं और उनके बच्चों को आत्महीनता से बचाने के लिए उन्होंने एक आश्रम की स्थापना भी की जो भारत वर्ष में अपने ढंग की पहली संस्था थी। इस तरह ज्योतिबा ने अपना सारा जीवन ही धर्म और समाज की सेवा में खपाकर उसे एक नई ज्योति दी।

महिला उत्थान के क्षेत्र में कुछ अन्य समाज सुधारकों के नाम भी उल्लेखनीय है, जिनमें गोपाल हरि देशमुख, पंडिता रमाबाई, महर्षि कर्वे व बाल गंगाधर तिलक प्रमुख हैं। महाराष्ट्र के नारी जागरण में रानाडे की भाँति लोकहित वादी गोपाल हरि देशमुख का भी उल्लेखनीय योगदान रहा है। वे स्त्री पुरूष दोनो के लिये समान अधिकारों के समर्थक रहे। सामाजिक उत्थान की दिशा में वे बाल विवाह को सबसे बड़ा रोड़ा मानते थे। इसी प्रकार पंडिता रमाबाई की गणना उन भारतीय वीरांगनाओं में है जिन्होने अथक परिश्रम और निःस्वार्थ सेवा से इस देश का माथा संसार में ऊंचा किया है। पण्डिता रमाबाई विख्यात समाज सुधारक थी। वह स्त्री शिक्षा की प्रबल समर्थक और समाज में नारी की पूर्ण स्वतंत्रता की पक्षधर थीं। उन्होंने स्वमं अपने जीवन में इन बातों पर अमल किया और उनके लिये उम्र भर वीर सिपाही की तरह लड़ती रहीं।

भारत की अनाथ विधवाओं के उद्धारक स्त्री शिक्षा एवं विधवा विवाह के प्रर्वतक महर्षि कर्वे का भी नारी उत्थान में योगदान महत्वपूर्ण है, जिनके अथक प्रयत्नों के परिणाम स्वरूप प्रथम महिला महाविद्यालय की स्थापना हुई। नारी वर्ग के लिये उन्नति व विकास एवं स्वालम्बन का मार्ग प्रशस्त करने में उन्होने महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया।

उपरोक्त सुधारवादी प्रयासों के फलस्वरूप समाज में महिलाओं की स्थिति का ऊंचा उठाने हेतु जनमत जागृत हुआ और इस दिशा में काफी प्रगति हुई। नवीन बुद्विजीवी मध्यम वर्ग के पुरूषों ने जहाँ एक ओर महिला उत्थान का कार्य किया वहीं दूसरी ओर महिलाओं में भी अनेक विदुषी एवं प्रबुद्व समाज सुधारक हुई जिनमें श्रीमती एनी बीसेंट,सरोजनी नायडू आदि प्रमुख हैं। जन जागृति को देखकर ब्रिटिश सरकार ने भी समाज सुधार हेतु कुछ कानून बनाए। समाज सुधारकों के प्रयत्नों से पर्दा–प्रथा में उल्लेखनीय कमी आई।

बाल–विवाह और बेमेल विवाह पर रोक लगा दी गई। सती–प्रथा पर प्रतिबन्ध इस सदी का उल्लेखनीय सुधार कहा जा सकता है, लेकिन अभी भी बहुत कुछ सुधारों की आवश्कता थी। पर्दा–प्रथा कम अवश्यक हुई थी,किन्तु पूरी तरह समाप्त नहीं हुई थी। बाल–विवाह तो आज भी देखे जा सकते हैं। विधवा–पुनर्विवाह को आज भी समाज में अच्छी नजरों से नहीं देखा जाता। आज भी समाज में कोमल–वय विधवाओं को देखा जा सकता है,लेकिन विधवाओं की दुर्दशा ऐसी नहीं थी जैसा कि 19वीं सदी के प्रारम्भ में थी। वस्तुतः 19 वीं सदी में नारी उत्थान की प्रक्रिया आरम्भ हो चुकी थी,जो आज भी जारी है।

1.3 शिक्षा का प्रसार –

मानव जाति के इतिहास से विदित होता है कि एक समय में जीवन इतना साधारण नहीं था कि किसी को लिखने–पढ़ने व सीखने की आवश्यकता ही नहीं थी। किन्तु जैसे– जैसे मानवीय क्रिया–कलापों में वुद्वि हुई जीवन की जटिलताएँ बढ़ी तथा ज्ञान–विज्ञान की उन्नति हुई शिक्षा की आवश्यकता बलवती होती गई। शिक्षा के इतिहास को देखें तो स्पष्ट होता है कि प्राचीन काल में पुत्र और पुत्रियों को समान रूप से शिक्षा देना माता–पिता का कर्तव्य माना जाता था। उस समय शिक्षा, विशेषकर वैदिक साहित्य से सम्बधित होने के कारण धार्मिक–विचारों एवं क्रियाकलापों–यज्ञ,हवन आदि से सम्बन्धित होती थी। प्राचीन भारतीय नारी की शिक्षा में कला–पक्ष का विशेष स्थान था। अतः स्पष्ट है कि प्राचीन काल में शिक्षित महिलाओं की कमी नहीं थी। स्त्री और पुरूष में शिक्षा की दृष्टि से कोई भी भेद नहीं किया जाता था और यही कारण था कि उस समय नारी को समाज में महत्वपूर्ण पद प्राप्त था। बाद के युग में महिलाओं का शनैः–शनैः शिक्षा से वंचित कर दिया गया। उन्नीसवीं सदी के प्रारम्भ तक भारत में स्त्री शिक्षा की कोई परम्परा या व्यवस्था नहीं थी। केवल अभिजातकुलीन परिवारों में कन्याओं को शिक्षा दी जाती थी एक गलत धारणा यह प्रचलित थी कि हिन्दू शास्त्रों में स्त्री शिक्षा की अनुमती नही थी और कन्या को शिक्षा देने से वह विधवा हो जाती थी। परन्तु जैसे ही सामाजिक और सांस्कृतिक पुनर्जागरण

प्रारंभ हुआ सुधारकों ने स्त्री शिक्षा के विषय में इस भ्रांति का घोर विरोध किया, उसका खण्डन किया और स्त्री शिक्षा की दिशा में कदम उठाये। सभी सुधार आन्दोलनों ने स्त्री शिक्षा के प्रसार के लिये प्रयास किये ।

1.3.1. ईसाई मिशनरियों का योगदान –:

स्त्री शिक्षा के क्षेत्र में ईसाई मिशनरियों का योगदान के कार्य उल्लेखनीय रहे। उन्होने ही इस दिशा में पहल की तथा भारतीय बालिकाओं को शिक्षित करने का कार्यक्रम आरम्भ किया।43 नारी शिक्षा के लिए पहला स्कूल मिशनरियों द्वारा मि. में के निर्देशन में बंगालमें चिनसुरा में स्थापित किया गया। 1818 में मि .में की अकाल मृत्यु हो जाने के कारण नारी शिक्षा के विकास की गति धीमी पड़ गई तथा सरकार ने उनके स्कूल की उपेक्षा कर दी। आधुनिक भारत के शिक्ष के इतिहास में मि .में प्रारम्भिक नारी–शिक्षा के अग्रदूत माने जाते हैं।

उन्नीसवीं सदी के आगमन के साथ ही ईसाई धर्म प्रचारकों ने नारी–शिक्षा के लिए पहल करनी प्रारंभ कर दी। ईसाई धर्म के प्रचार के दौर में सिरामपुर मिशन के मैरी मार्शमैन तथा बोर्ड ने भारतीय बालिकाओं को शिक्षित करने का निश्चय किया और कुछ भारतीयों के साथ मिलकर सिरामपुर तथा उसके आसपास के क्षत्रों में 1823 से बालिका विघालयों की स्थापना करने का कार्य प्रारंभ किया। बंगाल के अतिरिक्त उन्होंने बनारस इलाहाबाद एवं अराकान में भी बालिकाओं के लिये स्कूल खोले। विलियम एडम ने 1835 में अपनी प्रथम रिपोर्ट में यह लिखा –''इस समय सेंट्रल और क्रिश्चयन विलेज स्कूल शिक्षा देने में संलग्न है।सेन्ट्रल स्कूल में 138 और क्रिश्चयन विलेज स्कूल में 14 बालिकाएँ शिक्षा ग्रहण कर रही है। सन् 1849 में तीन शिक्षा प्रेमी मिशनरियों ने एक बालिका विद्यालय खोला और बंगाल के प्रतिष्ठित परिवारों को इसमें अपनी लड़कियों को भेजने के लिए प्रेरित किया। उस समय मि. बैथून ने जो बड़ा शिक्षा प्रेमी था स्त्रियों की उच्च शिक्षा के लिए एक स्कूल खोला जो विशेष रूप से उल्लेखनीय कहा जा सकता है। मि. बैथून का विचार था कि स्त्री शिक्षा की प्रगति तब तक नही हो सकती जब तक ऊँचे परिवार की बालिकाएँ स्कूलों में पढ़ने के लिये नहीं आती। इसी उद्धेश्य से उन्होंने अपनी संस्था में खूब जांच–पड़ताल करके छात्राओं को भर्ती किया। उन्होंने यह भी आश्वासन दिया कि बालिकाओं के स्कूल में किसी पुरूष आध्यापक की नियुक्ति नहीं की जावेगी। ईसाईयत की शिक्षा भी न देने की बात कही गयी। उनकी बातों का असर आश्चर्जनक रहा। शीघ्र ही उनके स्कूल में छात्राओं की संख्या पर्याप्त हो गयी।

ईसाई मिशनरियों ने देश के अन्य भागों में भी नारी शिक्षा के विकास के कार्य किए। सन् 1821 में मद्रास में बालिकाओं की शिक्षा के लिए एक–स्कूल खोला गया। मुम्बई में अमरीकी मिशन सोसायटी ने स्त्री शिक्षा के प्रसार का काम किया। सोसायटी ने वहाँ 1824 ई. में एक बालिका पाठशाला की स्थापना की। 1850 वर्ष के समाप्त होते–होते मिशनरियों के प्रयास से नारी शिक्षा के लिए पूरे देश में दिन में चलने वाले 354 स्कूल खुल गए जिनमें 1500 लड़कियाँ शिक्षा ग्रहण करती थी और जिनमें 91 आवासीय स्कूल थे।

यद्यपि ईसाई मिसनरियों को उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वाध्द में स्त्री शिक्षा के क्षेत्र में उल्लेखनीय सफलता नहीं मिली, परन्तु उनका प्रयास सराहनीय कहा जाएगा। स्त्री शिक्षा से संबंधित उस समय प्रचलित भ्रांति के बावजूद मिशनरियों ने जिस प्रकार बंगाल,मुंबई और मद्रास में उच्चवर्गीय परिवारों को लडकियों की शिक्षा के लिए प्रेरित किया, वह उल्लेखनीय है। मिशनरियों द्वारा स्थापित स्कूलों में बाइबल की शिक्षा दी जाती थ ी।जिसके चलते अनेक परिवार अपनी लड़कियों को उनके स्कूलों में नहीं भेजते थे। संभवतः इसी कारण से मिशनरियों को अपेक्षित सफलता नहीं मिली।

1.3.2 भारतीयों के प्रयास :–

कतिपय हिन्दू विद्वान भारतीय समाज सुधारक और संस्थाएँ भी स्त्री शिक्षा के क्षेत्र में सक्रिय रहे। यह एक ऐसा समय था जब भारतीय नारी ने सहमे–सहमे कदमों से घर और समाज की चारदीवारी को लांघने का साहस जुटाया और अपने कदम शिक्षा–मंदिरों की ओर बढ़ाये। शुरू–शुरू में तो नारी शिक्षा को समाज के विरोध का कड़ा सामना करना पड़ा। उस समय लोकमत स्त्री–शिक्षा के विरूद्ध था। न जाने क्यों पुरूषों में एक भ्रांत धाारण बनी हुई थी। कि स्त्री– शिक्षा से समाज में अनैतिकता का प्रसार होगा। अतः नारी को शिक्षा दिलाने के पक्षकारों पर नारी को गुमराह करने के आरोप तक लगाए, परन्तु नारी शिक्षा के प्रसारकों ने निरक्षर नारी के लिए शिक्षा की व्यवस्था करने का महत्ती कार्य प्रारम्भ कर दिया।

पण्डित गौर मोहन विद्यालंकार ने सन् 1822 में स्त्री शिक्षा के समर्थन में एक छोटी पुस्तिका लिखी जिसका नाम था ''स्त्री शिक्षा विधायक''। इसमें उन्होंने हिन्दू शास्त्रों से कई उदाहरण और प्रमाण देकर यह समझाने का प्रयास किया कि हिन्दूओं में स्त्री शिक्षा खूब फैली हुई थी। इसके बाद ईश्वरचन्द्र विघासागर ने भी स्त्री शिक्षा के प्रसार में अभूतपूर्व योगदान दिया। उन्होनें सन् 1857–58 में बंगाल में कम से कम 35 कन्या विघालय खोले और उनकी प्रगति से संबन्धित हो गये थे। 1849 में कलकत्ता में हिन्दू बालिका नामक नवीन स्कूल खोला गया। तत्कालीन अंग्रेज गर्वनर जनरल लार्ड डलहौजी की पत्नी और बाद में डलहौजी ने इस विघालय के लिए रू. 600 प्रतिमाह का अनुदान भी दिया। इस संस्था की यह विशेषता थी कि इसमें उच्चवर्ण और जातियों की कन्याओं का बाहुल्य था।

बंगाल के धार्मिक तथा सामाजिक आन्दोलन के सूत्रधारों में राजा राममोहन राय का नाम भी विशेष उल्लेखनीय है। राजा राममोहन राय महिलाओं के उत्थान व उनकी शिक्षा की दिशा के प्रयासों में अग्रणी रहे। उनके द्वारा संस्थापित ''ब्रम्ह–समाज'' के तत्वावधान में इस दिशा में अनेक कार्यक्रम अपनाये गये। ब्रम्ह समाज के द्वारा आरम्भ किये गये महिला समाज की शिक्षा और उत्थान का कार्यक्रम उत्तर भारत के दूसरे धर्म सुधार अन्दोलन आर्य–समाज के द्वारा भी अपनाया गया। आर्य समाज के संस्थापक दयानंद सरस्वती ने पुरूषों के समान स्त्रियों कों भी व्याकरण, धर्मशास्त्र, आयुर्वेद गणित शिल्प आदि सभी शिक्षाओं के लिए योग्य ठहराया। आर्य समाज ने विभिन्न स्थानों पर स्त्री शिक्षा की प्रगति के लिये कन्या–गुरूकुल की स्थापना की।

भारतीय समाज की जो समस्याएं स्वामी विवेकानंद की मानसिक चिंता का विषय थी उनमें से देश के सामाजिक जीवन में स्त्रियों की दुखद दशा की समस्या प्रमुख थी। स्वामी जी के मतानुसार स्त्रियों की बहुत सी, कठिन समस्याएं थी, पर उनमें एक भी ऐसी नहीं जो उस जादू–भरे शब्द 'शिक्षा' के द्वारा हल न हो सके। स्वामी विवेकानंद ने स्त्री शिक्षा के लिए जिस आदर्श को अपने सम्मुख रखा व पूर्णतः भारतीय था। वे चाहते थे कि भारतीय स्त्रियां सीता के आदर्श अपने समक्ष रखें। उनका कथन है भारत की स्त्रियों को सीता के पद चिन्हों पर चलना चाहिए।

इसके अतिरिक्त अनेक सुधारवादी नेताओं ने भी स्त्री–शिक्षा को प्रोत्साहित किया। केशव चन्द्र सेन, शशिपद बनर्जी, श्रीमती जे.सी. बोस, और श्रीमती पी.के. राय जैसे व्यक्तियों ने स्त्री शिक्षा के लिए ठोस प्रयास किये। स्त्रियों में शिक्षा व संस्कृति के प्रसार के लिए 'अबला बान्धव', 'महिला अन्तःपुर', 'भारती', 'भारत महिला' जैसे समाचार पत्रों का प्रकाशन हुआ। बड़े–बड़े नगरों में स्त्री शिक्षा के लिए महिला विद्यापीठ, सेवा सदन, गर्ल्स हाईस्कूल, हस्त–कला भवन आदि स्थापित किए गए।

दक्षिण में भी दक्षिण शिक्षा समिति ने स्त्री शिक्षा की समस्या के निराकरण के लिए महत्वपूर्ण सहायता प्रदान की। सन् 1907 में भारतीय महिला संस्था की स्थापना के बाद से स्त्री शिक्षा की ओर विशेष ध्यान दिया गया। इसके साथ स्त्रियों की साधारण दशा सुधारने के प्रयास भी किये। 1909 ई. में पूना में रानाडे द्वारा स्थापित 'पूना सेवा सदन' तथा 1908 में मालाबारी द्वारा स्थापित 'सेवा सदन सोसायटी' ने स्त्रियों को प्रशिक्षित करने के कार्य किये।53 नारी शिक्षा के क्षेत्र में अविस्मरणीय कार्य महर्षि कर्वे ने किया। कर्वे के ही प्रयास से सन् 1916 में स्त्रियों के लिये उपयेागी पाठ्यक्रम के अनुसार एक महिला विश्वविद्यालय स्थापित किया गया है। इस प्रकार के शिक्षालयों ने महिला शिक्षा के क्षेत्र में सभी परम्परागत बाधाओं एवं अवरोधों को समाप्त कर नारी को शिक्षित होने का पूर्ण अवसर प्रदान किया।54 इस प्रकार भारतीय समाज सुधारकों के अथक प्रयासों तथा सामाजिक संस्थाओं के सहयोग ने महिला शिक्षा के क्षेत्र में सभी परम्परागत बाधाओं एवं अवरोधों को समाप्त कर नारी को शिक्षित होने का पूर्ण अवसर प्रदान किया। फलस्वरूप भारतीय समाज, विशेष रूप से हिन्दू सामाजिक–संगठन में क्रांतिकारी परिवर्तन आया।

1.3.3 ब्रिटिश शासन की भूमिका –

ईस्ट इण्डिया कम्पनी के शासनकाल में 1813 के चार्टर एक्ट से भारतीय शिक्षा के इतिहास में एक नवीन युग का आरम्भ होता है। इस चार्टर एक्ट के द्वारा भारत में शिक्षा के प्रचार के लिए प्रतिवर्ष एक लाख रूपया खर्च करने की व्यवस्था की गयी। यद्यपि यह भारत की विशाल जनता को शिक्षित बनाने के लिए पर्याप्त नहीं था, तथापि भारतीयों की शिक्षा की ओर 1813 में सर्वप्रथम ब्रिटिश सरकार का ध्यान आकर्षित हुआ।

जब 1853 में कम्पनी के चार्टर का नवीनीकरण हुआ तो ब्रिटिश पार्लियामेंट ने भारत में शिक्षा के विकास की स्थिति की जांच करने के लिए एक समिति की नियुक्ति की। इस समिति की जांच के आधार पर कंपनी के संचालक ने भारत सरकार के पास एक शिक्षा सम्बन्धी पत्र भेजा जो 'वुड्स डिसपैच' के नाम से प्रसिद्ध है। 1854 के सर चार्ल्स वुड के शिक्षा–सम्बन्धी पत्र में स्त्री शिक्षा के विषय में भी परामर्श दिया गया। वुड के घोषणा–पत्र में स्त्री शिक्षा को प्रोत्साहन देने की सिफारिश तो की गई, किन्तु यह आदेश नहीं था कि सरकार स्त्री शिक्षा का उत्तरदायित्व स्वयं वहन करें। यही कारण था कि उक्त अवधि में स्त्री शिक्षा की प्रगति बहुत धीमी रही। यह तो कुछ सरकार की ढुलमुल नीति के कारण तथा अधिकांश में स्त्री शिक्षा के प्रति जनता की उदासी तथा दकियानूसी विचारधारा के कारण था। पर्दाप्रथा, बाल–विवाह,, कन्या–शिक्षा के प्रति माता–पिता की लापरवाही, पश्चिमी शिक्षा प्रणाली में जनता का अविश्वास, मध्यम श्रेणी के लोगों की आर्थिक स्थिति, स्त्री शिक्षकों की नितान्त कमी और कन्या शिक्षा के उचित पाठ्यक्रम का अभाव आदि ऐसे अनेक कारण थे जिन्होंने स्त्री–शिक्षा की गति को धीमा रखा। फिर भी बंगाल, मुम्बई, मद्रास और उत्तर–पश्चिमी प्रदेश आदि प्रान्तों में स्त्री शिक्षा के लिये अनेक स्कूल खोले गये।

लार्ड रिपन के 1880 में वायसराय बनने के पश्चात् शिक्षा की प्रगति और बढ़ गई। रिपन ने समाज की वास्तविकताओं का पता लगाने और प्रचलित शिक्षा प्रणाली के गुण–दोष समझने के लिए 1882 में पहला भारतीय शिक्षा आयोग नियुक्त किया। जिसका अध्यक्ष वायसराय की कार्यकारी परिषद के सदस्य सर विलियम हन्टर को बनाया गया। इस आयोग में कुछ भारतीय और मिशनरियों सहित 20 सदस्य थे। इस आयोग का प्रमुख उद्देश्य प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा की दशा की जांच करना था। साथ ही स्त्री शिक्षा के बारे में भी उसे सिफारिश करनी थी।

हण्टर कमीशन ने तत्कालीन स्त्री–शिक्षा की सोचनीय स्थिति के विषय में कहा कि स्त्री शिक्षा अत्यधिक पिछड़ी हुई दशा में थी। स्त्री शिक्षा की सर्वतोमुखी उन्नति के लिये आयोग ने सुझाव दिया कि स्थानीय म्युनिसिपल और प्रांतीय सार्वजनिक कोषों की स्थापना की जाए, जिससे बालक और बालिकाओं के विद्यालयों के लिए अनुपात में धन व्यय किया जायें। आयोग ने यह भी सिफारिश की कि उन वर्गों की बालिकाओं की शिक्षा के लिये अधिक उदार सहायता दी जाये, जो स्वयं शिक्षा के लिये धन व्यय करने में असमर्थ थे और जिनके बच्चे प्रायः घर के कामों में माता–पिता को सहायता देने के लिये बाध्य थे। आयोग ने सुझाव दिया कि बालिकाओं को निःशुल्क शिक्षा दी जाये तथा उन्हें छात्रवृत्तियां देने की योजना बनायी जाये।

आयोग का विचार था कि तत्कालीन भारतीय समाज में पर्दा–प्रथा का बहुत प्रचलन था। अतः उसने सिफारिश की कि सरकार बालिकाओं की शिक्षा के लिये हर प्रकार से प्रयत्न करें। अध्यापिकाओं की नियुक्ति दी जाये और वे घरों में जाकर बालिकाओं को शिक्षा दें। स्त्री शिक्षा को प्रेरित करने हेतु आयोग ने जन सहयोग लेने की अपील की। जिसके परिणामस्वरूप विद्यालयों के कार्य में किसी प्रकार की बाधा न पड़े। हंटर आयोग के सुझावों के अनुसार भारत में स्त्री शिक्षा की व्यवस्था की। परिणामस्वरूप स्त्रियों की शिक्षा का विकास हुआ। फिर भी उन्नीसवीं शताब्दी के अंत तक भारत में पुरूषों की तुलना में स्त्रियों की शिक्षा का प्रतिशत बहुत कम था।

भारत सरकार ने 14 सितम्बर 1917 को कलकत्ता विश्वविद्यालय आयोग की नियुक्ति की। इसके अध्यक्ष डॉ. माइकल सैडलर थे। उन्हीं के नाम पर इसे सैडलर कमीशन भी कहा जाता है। स्त्रियों में शिक्षा के प्रसार के लिये आयोग ने जो सुझाव दिये हैं :–

1. जो बालिकाएं 15 या 16 वर्ष की आयु तक पढ़ना चाहती थीं उनके लिये सरकार द्वारा पर्दा–स्कूलों का प्रबन्ध किया जाये।

2. कलकत्ता विश्वविद्यालय में स्पेशल बोर्ड ऑफ 'विमेन्स एजुकेशन' का निर्माण किया जाये। यह बोर्ड महिलाओं के लिये विशेष पाठ्यक्रम तैयार करें और उनकी अध्यापिकाओं के प्रशिक्षण एवं चिकित्सा –शिक्षा की सुविधा दें।

3. सह शिक्षा को प्रोत्साहित किया जाये।

इससे स्पष्ट हो जाता है कि आयोग भारत में स्त्री–शिक्षा का प्रचार चाहता था। उसने पर्दानशीन लड़कियों के लिये पर्दा–स्कूलों की व्यवस्था का सुझाव देकर उनकी शिक्षा को

सुगम बना दिया। उनके लिये विशेष पाठ्यक्रम, प्रशिक्षण और चिकित्सा शिक्षा की सिफारिश करके आयोग ने उनको आगे बढ़ने के लिये प्रोत्साहित किया।

इस प्रकार ब्रिटिश भारत में नारी शिक्षा के क्षेत्र में काफी विकास हुआ। इस विकास में समाज सुधारकों व ईसाई मिशनरियों का योगदान भी महत्वपूर्ण था, किन्तु फिर भी ये सन्तोषप्रद नहीं कहे जा सकते। नारी शिक्षा में सर्वाधिक रूकावट पर्दा–प्रथा बाल–विवाह और भारतीयों की दरिद्रता कारण थे।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि पश्चिमी विचाराधारा का प्रभाव, भारतीय समाज सुधारकों का योगदान और स्त्रियों में शिक्षा के विकास से भारतीय समाज में नारी की स्थिति में उल्लेखनीय परिवर्तन आया। 19वीं शताब्दी के प्रारम्भ तक नारी की स्थिति दयनीय हो चुकी थी। उसके व्यक्तित्व का कोई अस्तित्व ही नहीं था। लेकिन इस शताब्दी के उत्तरार्द्ध में उनकी स्थिति में काफी सुधार आ गया। महिलाओं के उत्थान में इन कारकों की महत्वपूर्ण भूमिका थी।

सन्दर्भ

क्र.		
1.	डॉ. राधाकृष्णन	धर्म और समाज, पृ. 175
2.	भारती	भारतीय चेतना और विकास, पृ. 26–27
3.	राजेन्द्र पाण्डेय	भारत का सांस्कृति इतिहास, पृ. 330
4.	कालूराम शर्मा एवं प्रकाश व्यास	भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति का इतिहास, पृ. 419
5.	रवीन्द्र नाथ मुकर्जी	भारतीय समाज व संस्कृति, पृ. 348
6.	कालूराम शर्मा एवं प्रकाश व्यास	पूर्वोद्धृत, पृ. 420
7.	रवीन्द्र नाथ मुकर्जी	पूर्वोद्धृत, पृ. 349–350
8.	जे. पी. सिंह	सामाजिक परिवर्तन : स्वरूप एवं सिद्धांत पृ.
9.	बी.एन. लूणिया	आधुनिक भारत, पृ. 153
10.	सुनील गोयल	भारत में सामाजिक परिवर्तन पृ. 116–117
11.	कालूराम शर्मा एवं प्रकाश व्यास	पूर्वोद्धृत, पृ. 422
12.	रवीन्द्र नाथ मुकर्जी	पूर्वोद्धृत, पृ. 354–355
13.	दया प्रकाश रस्तौगी	भारत का इतिहास (1526 ई. से अब तक) पृ. 80
14.	एस.एल. नागोरी एवं कान्ता नागोरी	भारतीय संस्कृति के मूल आधार, पृ. 186
15.	आई.एस. चौहान (सं.)	भारत में सामाजिक परिवर्तन, पृ. 50
16.	रामनाथ शर्मा एवं राजेन्द्र कुमार शर्मा	भारत में सामाजिक परिवर्तन एवं सामाजिक समस्यायें, पृ. 171
17.	सीताराम शर्मा	उन्नीसवीं शती के भारतीय धार्मिक तथा सामाजिक जागरण, पृ. 189
18.	कालूराम शर्मा एवं प्रकाश व्यास	पूर्वोद्धृत, पृ. 244
19.	प्रताप सिंह	आधुनिक भारत का सामाजिक एवं आर्थिक इतिहास, पृ. 20–21
20.	एल.पी. शर्मा	आधुनिक भारतीय संस्कृति, पृ. 31
21.	वी.पी. वर्मा	माडर्न इंडियन पोलिटिकल थाट, पृ. 20
22.	प्रताप सिंह	पूर्वोद्धृत, पृ. 25
23.	कृष्ण वल्लभ द्विवेदी	भारत निर्माता, पृ. 20
24.	मोहन राकेश	समय सारथी, पृ. 66
25.	दयानंद सरस्वती	सत्यार्थ प्रकाश, पृ. 112–208
26.	मेहन राकेश	पूर्वोद्धृत, पृ. 70
27.	रोमा रोला	द लाइफ ऑफ विवेकानंद, पृ. 19
28.	स्वामी विवेकानंद	शिक्षा संस्कृति और समाज, पृ. 47, 48
29.	स्वामी विवेकानंद	शिक्षा, पृ . 65
30.	स्वामी विवेकानंद	भारतीय नारी, पृ. 28
31.	स्वामी विवेकानंद	विवेकानंद साहित्य, पृ. 324
32.	सीताराम शर्मा	पूर्वोद्धृत, पृ. 204
33.	प्रताप सिंह	पूर्वोद्धृत, पृ. 24
34.	सीताराम शर्मा	पूर्वोद्धृत, पृ. 222